सत्यार्थप्रकाश में राष्ट्रीय भावना

डॉ. सुभाष चन्द्र, व्याख्याता संस्कृत
राजकीय महा वद्यालय, बहरोड़, अलवर

1. मह र्ष दयानन्दकालीन भारत

समय, परिस्थिति और वचार परिवर्तनशील हैं यह तथ्य सर्व वदित है । कन्तु महापुरुष प्रच लत कुरीतियों का उन्मूलन करके परोपकार से लोकवन्द्य बन जाते हैं ।संसार में जितने भी महापुरुष हुए उन्होंने तात्का लक वचारों और परिस्थितियों को सुधार कर जनता का सही मार्गदर्शन कया। उनमें मह र्ष दयानन्द के प्रादुर्भाव के समय भारत धा र्मक, सामाजिक, आ र्थक एवं राजनीतिक दृष्टि से अतिजर्जर और छिन्न- भन्न हो गया था। ऐसे वकट समय में जन्म लेकर मह र्ष ने देश के आत्मगौरव के पुनरुत्थान का अभूतपूर्व कार्य कया ।

भारत परतन्त्रता ही नहीं अ शक्षा, अ वद्या, अज्ञान, भेदभाव, बहु-ईश्वरवाद, बहु-धर्मग्रन्थवाद, रूढियों, पाखण्डों, आडम्बरों भ्रान्तियों, कुरीतियों से तरह जकड़ा हुआ था । ऐसे गहन अन्धकार में सूर्य की तरह ब्रह्मचर्य, वेद वद्या, तपस्या, त्याग आदि सद्गुणों से सम्पन्न यतिसम्राट् के रूप में भारत में जन्म लेकर अ वद्या के अंधेरे को दूर कया।

राजनैतिक पराधीनता के कारण वच लत, निराश व हताश भारतीय जनमानस को मह र्ष दयानन्द ने आत्मबोध, आत्मगौरव स्वा भमान एवं स्वाधीनता का मन्त्र प्रदान कया। स्वामी दयानन्द 19वीं सदी के नवजागरण के पुरोधा थे, जिन्होंने मध्ययुगीन अंधकार को दूर कया।

लोक कल्याण के नि मत्त अपने मोक्ष के आनन्द को वरीयता न देकर अंध वश्वासों का प्रखरता से खंडन कया। अज्ञान, अन्याय और अभाव से ग्रस्त लोगों

का उद्धार करने हेतु वे जीवन पर्यन्त संघर्ष करते रहे। मह र्ष दयानन्द ने सत्य की खोज के लए अपने वैभवसंपन्न परिवार का त्याग कया।

1875 में स्वामी दयानन्द ने मुंबई में आर्य समाज की स्थापना की। उन्होंने वेदों को समस्त ज्ञान एवं धर्म के मूल स्रोत और प्रमाण ग्रंथ के रूप में स्था पत कया। अनेक प्रच लत मथ्या धारणाओं को तोड़ा और अनु चत पुरातन परंपराओं का खंडन कया। उस समय मह र्ष दयानन्द ने सर्वप्रथम उद्घोष कया क वेद सब सत्य वद्याओं की पुस्तक है। वेद का पढना-पढ़ाना और सुनना-सुनाना सब आर्यों का परम धर्म है।[1] संपूर्ण भारतीय जनमानस को उन्होंने वेदों की ओर लौटने का आह्वान कया। वेद के प्रति यह दृष्टि ही स्वामी दयानन्द की वलक्षणता है। उन्होंने मनुष्य मात्र के लए वेदों के अध्ययन के द्वार खोले थे, जिसके माध्यम से उन्होंने भारतीय संस्कृति के पुनरुत्थान का मार्ग प्रशस्त कया।

वे वेद ज्ञान के अद् वतीय प्रचारक थे, जिन्होंने भारतवर्ष के सुप्त पड़े हुए आध्यात्मिक स्वा भमान व स्वावलंबन को पुन जागृत कया। वे ऐसे धर्माचार्य थे, जिन्होंने धा र्मक वषयों को केवल आस्था व श्रद्धा के आधार पर मानने से इनकार कर उन्हें बु द्ध- ववेक की कसौटी पर कसने के उपरांत ही मानने का सद्धांत दिया। उन्होंने मनुष्य को अपनी बु द्ध, ववेक शक्ति तथा चंतन प्रणाली का उपयोग करने के लए प्रेरित कया। उन्होंने राष्ट्रवाद के सभी प्रमुख सोपानों जैसे क स्वदेश, स्वराज्य, स्वधर्म और स्वभाषा इन सभी के उत्थान के लए महत्वपूर्ण योगदान दिया। वह स्वराज्य के सर्वप्रथम उद्घोषक और संदेशवाहक थे। अंग्रेजों की दासता में डूबे देश में राष्ट्र गौरव, स्वा भमान व स्वराज्य की भावना से युक्त राष्ट्रवादी वचारों की शुरुआत करने तथा उपदेश, लेखों और अपने कृत्यों से निरंतर राष्ट्रवादी वचारों को पो षत करने के कारण वे आधुनिक भारत में राष्ट्रवाद के जनक थे।

सबसे पहले वर्ष 1876 में स्वामी जी ने ही स्वराज का नारा दिया, जिसे बाल गंगाधर तिलक ने आगे बढ़ाया। "कोई कतना ही करे परन्तु जो स्वदेशीय राज्य होता है

वह सर्वोपरि उत्तम होता है । अथवा मत-मतान्तर के आग्रह रहित अपने और पराये का पक्षपात शून्य प्रजा पर पता माता के समान कृपा न्याय और दया के साथ वदे शयों का राज्य भी पूर्ण सुख दायक नहीं है । परन्तु भन्न भन्न भाषा पृथक् पृथक् शक्षा अलग व्यवहार का वरोध छूटना अति दुष्कर है वना इसके छूटे परस्पर का पूरा उपकार और अ भप्राय सद्ध होना कठिन है।"[2] वीर सावरकर ने इस महामानव के वषय में लखा क, स्वतंत्रता संग्राम के प्रथम योद्धा निर्भीक संन्यासी स्वामी दयानंद ही थे। तत्कालीन बिखरे हुए भारतवर्ष को स्वामी दयानंद ने ही एकता के सूत्र में परोने का कार्य कया था। गुजराती पृष्ठभू म होने के बावजूद स्वामी जी ने आर्य भाषा हिंदी को राष्ट्र की भाषा बनाने का प्रयास कया। संस्कृत के प्रकांड वद्वान् होने पर भी उन्होंने अपने उपदेशों का माध्यम हिंदी भाषा को ही बनाया। स्वामी जी परम योगी, अद् वतीय ब्रह्मचारी, ओजस्वी वक्ता थे। वे जानते थे क सशक्त भारत के निर्माण के लए युवाओं को श्रेष्ठ शक्षा पद्धति के माध्यम से ब्रह्मचर्य के तप में तपाकर ही राष्ट्र के स्व र्णम स्वा भमान और स्वाधीनता के मार्ग को प्रशस्त कया जा सकता है। इसके लए स्वामी जी ने गुरुकुल पद्धति का वधान कया, ता क राष्ट्र का प्रत्येक युवा शारीरिक, मान सक और आत्मिक शक्तियों से परिपूर्ण होकर भारतीय वैदिक संस्कृति की रक्षा के लए तत्पर हो। मह र्ष ने वेद के उपदेशों के माध्यम से भारतीय समाज को एक नया जीवन दिया। मह र्ष ने बाल ववाह, पर्दा प्रथा, जाति प्रथा,छुआछूत जैसी अनेक सामाजिक बुराइयों के वरुद्ध जीवनपर्यंत संघर्ष कया। उन्होंने समाज में द लतों और शो षतों को समानता का अ धकार देकर सामाजिक एकता, समरसता व सद्भावना की नींव रखी। महान फ्रेंच लेखक रोम्या रोलां ने मह र्ष के अछूतोद्धारक कार्यों की प्रशंसा करते हुए लखा क मह र्ष दयानन्द ने वेद के दरवाजे संपूर्ण मानव जाति के लए खोले थे। उनके लए संपूर्ण मनुष्य एक ही ईश्वर की संतान हैं। द लतों, शो षतों और अछूतों के अ धकारों का स्वामी दयानंद जैसा प्रबल समर्थक कोई नहीं हुआ । उनका चंतन था क सत्य को ग्रहण करने और असत्य को त्यागने में मनुष्य को सर्वदा

तैयार रहना चाहिए। उन्होंने तत्कालीन राजा महाराजाओं एवं अंग्रेजी साम्राज्य के भय, लोभ, लालच की परवाह न करते हुए सत्य का उपदेश दिया। वेदों के स्व र्णम चंतन को अपने अमर ग्रंथ सत्यार्थ प्रकाश, ऋग्वेदादिभाष्यभू मका, संस्कार व ध में प्रस्तुत कया।

उन्होंने भारतवर्ष के अतीत की गरिमा का पक्ष अत्यंत प्रबलता से प्रस्तुत कया, जिससे भारतवर्ष में स्वा भमान एवं राष्ट्रीयता का समावेश हुआ। स्वामी जी स्वाधीनता और स्वराज्य के प्रबल समर्थक थे। उन्होंने वदे शयों के आगे निर्भीकता से अपना पक्ष रखा। कोलकाता में 1873 में तत्कालीन अंग्रेज अ धकारी नार्थ ब्रूक ने स्वामी जी से कहा क अंग्रेजी राज्य सदैव रहे, इसके लए भी ईश्वर से प्रार्थना कीजिएगा। उन्होंने निर्भीकता के साथ उत्तर दिया क स्वाधीनता और स्वराज्य मेरी आत्मा और भारतवर्ष की आवाज है और यही मुझे प्रय है। मैं वदेशी साम्राज्य के लए प्रार्थना कदा प नहीं कर सकता। स्वामी जी कहा करते थे क आर्यावर्त देश ही सच्चा पारसम ण है क जिसको लोहे रूप दरिद्र वदेशी छूते के साथ ही सुवर्ण अर्थात् धनाढ्य हो जाते हैं ।[3]

एतद्देशप्रसूतस्य सकाशादग्रजन्मनः ।

स्वं स्वं चरित्र शक्षेरन् पृ थव्यां सर्वमानवाः ||[4]

आर्यावर्त (भारत) ही वह भू म है, जो रत्नों को उत्पन्न करती है।

3. राष्ट्र के तीन अंग भू म : जनता और संस्कृति

राष्ट्र का स्वरूप जिन तत्त्वों से मलकर बना है, वे तीन तत्व हैं- पृथ्वी (भू म), जन और संस्कृति

पृथ्वी (भू म) को समृद्ध बनाने पर बल

भू म का निर्माण ब्रह्माण्ड का एक सजीव भाग है तथा इसका अस्तित्व अनन्तकाल से वद्यमान है। इस लए मानव जाति का यह कर्तव्य है क वह इस भू म के प्रति सचेत रहे. इसके रूप को वकृत न होने दे तथा इसे समृद्ध बनाने की दिशा में सजग रहे। भू म के पा र्थव स्वरूप के प्रति हम जितना अ धक जागरूक रहेंगे, हमारी

राष्ट्रीयता उतनी ही बलवती होगी, क्यों क हमारी समस्त वचारधाराओं की जननी वस्तुतरू यह पृथ्वी ही है। जो राष्ट्रीय वचारधारा पृथ्वी से सम्बद्ध नहीं होती, वह आधार वहीन होती है और उसका अस्तित्व थोड़े समय में ही नष्ट हो जाता है। राष्ट्रीयता का आधार जितना सशक्त होगा, राष्ट्रीयता की भावनाएँ भी उतनी ही अ धक वक सत होंगी। इस लए प्रारम्भ से अन्त तक पृथ्वी के भौतिक स्वरूप की जानकारी रखना तथा इसके रूप-सौन्दर्य, उपयो गता एवं महिमा को पहचानना प्रत्येक मनुष्य का आवश्यक धर्म है।

माता भू मः पुत्रोऽहं पृ थव्याः

माता भू मः पुत्रोऽहं पृ थव्या: यह पृथ्वी (भू म) वास्तव में हमारे लए माँ है, क्यों क इसके द्वारा दिए गए अन्न-जल से ही हमारा भरण-पोषण होता है। इसी से हमारा जीवन अर्थात् अस्तित्व बना हुआ है। धरती माता की कोख में जो अमूल्य नि धयाँ भरी हुई हैं, उनसे । हमारा आ र्थक वकास सम्भव हुआ है और आगे भी होगा। पृथ्वी एवं आकाश के अन्तराल में जो सामग्री भरी हुई है, पृथ्वी के चारों ओर फैले गम्भीर सागर में जो जलचर एवं रत्नों की रा शयां हैं, उन सबका हमारे जीवन पर गहरा प्रभाव पड़ा है। अतः हमें इन सबके प्रति आत्मीय चेतना रखने की आवश्यकता है। इससे हमारी राष्ट्रीयता की भावना को वक सत होने में सहायता मलती है।

राष्ट्र का सर्वा धक महत्त्वपूर्ण एवं सजीव अंग मनुष्य

पृथ्वी अर्थात् भू म तब तक हमारे लए महत्त्वपूर्ण नहीं हो सकती, जब तक इस भू म पर निवास करने वाले मनुष्य को साथ में जोड़कर न देखा जाए। जो भू म जन वहीन हो, उसे राष्ट्र नहीं माना जा सकता। राष्ट्र के स्वरूप का निर्माण पृथ्वी और जन (मनुष्य) दोनों की वद्यमानता की स्थिति से ही सम्भव है। पृथ्वी मेरी माता है और मैं उसका आज्ञाकारी पुत्र हूँ, इस भावना के साथ तथा माता-पुत्र के सम्बन्ध की मर्यादा को स्वीकार करके प्रत्येक देशवासी अपने राष्ट्र एवं देश के लए कार्य करते हुए अपने कर्तव्यों और अ धकारों के प्रति सजग हो सकता है। पृथ्वी पर रहने वाले जनों का

वस्तार व्यापक है और इनकी वशेषताएँ भी व वध हैं। वस्तुतः जन का महत्त्व सर्वा धक है। जन के बिना राष्ट्र की कल्पना करना भी असम्भव है।

राष्ट्र की प्रगति समानता के भाव द्वारा ही सम्भव

यजुर्वेद के एक मन्त्र में राष्ट्र के व भन्न घटकों के सुख-समृ द्ध की कामना की गयी है। वेदों में राष्ट्र के कल्याण सम्बन्धी अनेक प्रार्थनायें हैं। वैदिक राष्ट्र चन्तन का यह एक उदाहरण मात्र है। यह प्रार्थना राष्ट्र के लये आज भी उतनी ही प्रासं गक है जितनी उस समय थी।

आ ब्रह्मन् ब्राह्मणो बह्मवर्चसी जायताम् आ राष्ट्रे राजन्यः शूर इषव्यः अतिव्याधी महारथो जायताम् दोग्ध्रीर्धेनुर्वोढानड्वानाशुःसप्तिः पुरन्धीर्योषा जिष्णू रथेष्ठाः सभेयो युवाअस्य यजमानस्य वीरो जायतां निकामे निकामे नः पर्जन्यो वर्षतु फलवत्यो न ओषधयः पच्यन्ताम् योगक्षेमो नः कल्पताम्[6]

प्रत्येक माता अपने सभी पुत्रों को समान भाव से प्रेम करती है। इसी प्रकार पृथ्वी भी उस पर रहने वाले सभी मनुष्यों को समान भाव से चाहती है, उसके लए सभी मनुष्य समान हैं। इस लए धरती माता अपने सभी पुत्रों को समान रूप से समस्त सु वधाएँ प्रदान करती है। धरती पर रहने वाले मनुष्य भले ही अनेक जातियों, धर्मों, समुदायों से सम्बन्ध रखते हों, कन्तु फर भी ये सभी मातृभू म के पुत्र हैं, मातृभू म के साथ उनका जो सम्बन्ध है, उसमें कोई भेदभाव उत्पन्न नहीं हो सकता। धरती पर सब जातियों के लए एक समान क्षेत्र है। इस लए सभी मनुष्यों को देश की प्रगति और उन्नति करने का एक समान अ धकार है। कसी एक जन को पीछे छोड़कर राष्ट्र प्रगति नहीं कर सकता। अतः सभी को एक समान रूप से प्रगति और उन्नति करने का अवसर मलना चाहिए उनमें कसी प्रकार का भेदभाव नहीं होना चाहिए।

समस्त देशवा सयों का यह कर्त्तव्य है क वे अपने निजी स्वार्थों को त्यागकर तथा संकु चत दायरे से निकलकर उदार एवं व्यापक दृष्टिकोण अपनाएँ। इस प्रकार समानता के भाव द्वारा ही राष्ट्र की प्रगति सम्भव है।

संस्कृति : मनुष्य के मस्तिष्क का प्रतीक

यह संस्कृति ही जन का मस्तिष्क है और संस्कृति के वकास एवं अभ्युदय के द्वारा ही राष्ट्र की वृ द्ध सम्भव है। राष्ट्र के समग्र रूप में भू म और जन के साथ-साथ संस्कृति का महत्त्वपूर्ण स्थान है। अगर भू म और जन को संस्कृति से अलग कर दिया जाए तो राष्ट्र प्रगति नहीं कर सकता। कसी भी राष्ट्र के लए संस्कृति उसकी जीवनधारा है। प्रत्येक घटक अपनी वशेषताओं के साथ संस्कृति का वकास करती है। इस प्रकार प्रत्येक जन अपनी भावना के अनुसार अलग-अलग संस्कृतियों को राष्ट्र के रूप में वक सत करता है। अनेक संस्कृतियों के एक साथ रहने के बावजूद सभी संस्कृतियों का मूल आधार पारस्परिक सहिष्णुता एवं समन्वय की भावना है। यही हमारे बीच पारस्परिक प्रेम एवं भाईचारे का स्रोत है तथा इसी से राष्ट्रीयता की भावना को बल मलता है। सहृदय व्यक्ति प्रत्येक संस्कृति के आनन्द पक्ष को स्वीकार करता है

4. राष्ट्रीय भावना की अवधारणा

राष्ट्रीयता कसी भी राष्ट्र के व्यक्तियों के मध्य एकता की भावना होती है, इसमें देशप्रेम, देशभक्ति व देश के प्रति समर्पण की भावना छिपी रहती है और राष्ट्र हित की भावना के आगे वैयक्तिक व सामूहिक हितों को त्याग का प्रवृत्ति पायी जाती है, यही भावना राष्ट्रीयता कहलाती हैं।

वर्तमान युग राष्ट्रीयता का युग माना जाता है। सभी देश अपने निवा सयों में राष्ट्रीयता की भावना पर निर्भरत करते हैं, और यह प्रयास करते है क शक्षा वद्या र्थयों में राष्ट्रीयता को प्रफुल्लित करें और उसके वकास में सहायक हो। राष्ट्रीयता देश के सभी नागरिकों में हम और हमारा का दृष्टिकोण उत्पन्न कर देता है और यह सबको एक सूत्र में बांधे रहता है। कसी भी राष्ट्र में भन्न क्षेत्रों भाषा जाति धर्म व संस्कृति के लोग रहते है, परन्तु इतने व भन्नता के होते हुये भी कसी राष्ट्र के व्यक्ति समान हित की भावना से जुड़े होते हैं और सभी व्यक्तियों के इन समान हितों

की रक्षा के लये राज्य उत्तरदायी होता है और यह व्यक्ति को व्यक्तिगत हितों से ऊपर राष्ट्र के हितों को रखने पर ही सम्भव हो पाता है। राष्ट्रीयता की व्याख्या व भन्न प्रकार से की गयी है इसे मन की स्थिति तथा आत्मा की सम्पत्ति मानते हैं। यह भावना जीवन एवं वचार की पद्धति के रूप में भी मानी जाती हैं।

"राष्ट्रीयता साधारण रूप से देश प्रेम की अपेक्षा देश भक्ति के अ धक व्यापक क्षेत्र की ओर संकेत करती है राष्ट्रीयता में स्थान के सम्बन्ध के अलावा, प्रजाति, भाषा, इतिहास, संस्कृति और परम्पराओं के भी सम्बंध आ जाते हैं।"

राष्ट्रीयता के तत्व या घटक

राष्ट्रीयता को इसके घटक पदों में परिभा षत करना अत्यंत कठिन है। यह एक मनोवैज्ञानिक संकल्पना है, अथवा व्यक्तिगत वचार। अतः यह असंभव है क कोई ऐसा समाज गुण अथवा निश्चित रु च हो सकती है। जो राष्ट्रीयता में सभी जगहों पर समान हो। अतः हम निश्चित रूप से नहीं कह सकते है क यह वशेष घटक एक अलग राष्ट्रीयता समान है। इस प्रयास में हम यहां कुछ घटकों को सूचीबद्ध कर सकते है जो क है-

1. भौगो लक संलग्नता
2. भाषा समुदाय
3. समान राजनीतिक व्यवस्था
4. आ र्थक कारक
5. एक समान अधीनस्थता

1. भौगो लक संलग्नता : हर व्यक्ति के मन में अपनी जमीन से कसी न कसी रूप में लगाव अवश्य होता है, जिसे उसके राष्ट्र, उसकी मातृभू म अथवा उसकी पतृभू म के रूप में जानते है।

2. भाषा समुदाय : सामान्यत कसी भी राष्ट्र के नागरिकों की एक आम भाषा होती है। क्यों क इसी के माध्यम से वे अपने वचार तथा संस्कृति का परस्पर आदान-प्रदान करते हैं।

3. समान राजनीतिक व्यवस्था : कसी राज्य में समान राजनीतिक ढांचे का होना भी चाहे वह वर्तमान में हो या भूत में राष्ट्रीयता का एक घटक है। एक राज्य में लोग कानून के द्वारा एकसूत्र में बंधे होते हैं। एक ही राज्य में इस प्रकार रहने से एकता की भावना उत्पन्न होती है। व भन्न संकट की घ ड़यों में जैसे क युद्ध के समय देशभक्ति की भावना का वकास होता है। वास्तव में सरकार व भन्न तरीकों द्वारा इसे प्रोत्साहित करती है।

4. आ र्थक कारक : आ र्थक कार्यकलाप लोगों को एक दूसरे के समीप लाते हैं। यह तर्क दिया जाता है क ऐतिहा सक रूप से व भन्न जनजातियों और कुलों के मश्रण के परिणामस्वरूप ही राष्ट्रीयता उभरती है।

5. एक समान अधीनस्थता : राष्ट्रीय आंदोलनों को उभरने में समान अधीनस्थता एक महत्वपूर्ण कारक रहा है। एकसमान अधीनस्थता के कारण उनमें राष्ट्रीयता की भावना उत्पन्न हुई क्यों क इसने लोगों में एक होने की भावना जागृत की।

उपरोक्त सभी तत्त्व राष्ट्रीयता को उभारने में सहायक होते हैं, कन्तु इनमें से कोई भी तत्त्व आत्मिक रूप से राष्ट्रीयता को नि र्मत नहीं करता । वस्तुतः राष्ट्रीयता एक व्यक्ति परक भावनात्मक संवेदना से जुड़ी चीज है, जिसे कसी भी एक वस्तुगत तथ्य के द्वारा परिभा षत नहीं कया जा सकता। इन उपरोक्त तथ्यों में से कसी भी तथ्य की उपस्थिति अथवा अनुपस्थिति राष्ट्रीयता की भावना की उपस्थिति या अनुपस्थिति को अनिवार्य रूप से प्रभा वत नहीं करता है।

5. राष्ट्रीय भावना का प्रेरणा स्रोत सत्यार्थप्रकाश की उपादेयता

सत्यार्थप्रकाश और ऋ ष दयानन्द की जीवनी स्वाधीनता संग्राम के क्रांतिकारियों की प्रय पुस्तक बनी। एक अंग्रेज वद्वान् शेरोल ने यहाँ तक कहा क

सत्यार्थप्रकाश ब्रिटिश सरकार क जड़ें उखाड़ने वाला ग्रंथ है। वनायक दामोदर सावरकर के शब्दों में सत्यार्थप्रकाश ने हिन्दू जाति क ठंडी रगों में उष्ण रक्त का संचार कया। सत्यार्थप्रकाश से संस्कृत के साथ हिन्दी भाषा का महत्व बढ़ा। अकेले सत्यार्थप्रकाश ने अनेकों क्रन्तिकारी और समाज सुधारक पैदा कए। सत्यार्थप्रकाश ने वेदों का महत्त्व बढ़ा दिया।

6. भारत का अतीत, वर्त्तमान, भ वष्यत्

हम कौन थे, क्या हो गये हैं, और क्या होंगे अभी
आओ वचारें आज मल कर यह समस्याएं सभी
भू लोक का गौरव, प्रकृति का पुण्य लीला स्थल कहां
फैला मनोहर गरि हिमालय और गंगाजल कहां
संपूर्ण देशों से अ धक कस देश का उत्कर्ष है
उसका क जो ऋ ष भू म है, वह कौन भारतवर्ष है
यह पुण्य भू म प्र सद्ध है, इसके निवासी आर्य हैं
वद्या कला कौशल्य सबके जो प्रथम आचार्य हैं
संतान उनकी आज यद्य प, हम अधोगति में पड़े
पर चह्न उनकी उच्चता के आज भी कुछ हैं खड़े[8]

6. शोध निष्कर्ष

उपर्युक्त प्रतिपादन से यह वषय स्पष्ट हो जाता है क सत्यार्थ प्रकाश अन्य व वध धा र्मक, सांस्कृतिक, वैज्ञानिक, ऐतिहा सक आदि उदात्त वचारों का स्रोत होते हुये राष्ट्रीय भावना का स्रोत है कन्तु सार्वभौम वचारों का भी सुपोषक है । सत्यार्थप्रकाश न केवल राष्ट्रीय भावना का स्रोत है अ पतु भूमण्डलीय आध्यात्मिक वचारों एवं सम्पूर्ण मानवता के वकास का स्रोत भी है। ऐसा इसके अध्ययन से ज्ञात होता है। राष्ट्र के उन्नायक वचारों का उन्नीसवीं सदी के सूत्रधार सत्यार्थ प्रकाश को ही मानना पड़ेगा। इसमें शैक्ष णक तत्त्व को राष्ट्रीय चेतना का एक अङ्ग मानने से जो

महिला शक्षा और साधारण जन शक्षा मह र्ष ने सप्रमाण उपस्था पत कया वह एक अद् वतीय राष्ट्रीय प्रेरणा स्रोत बनता है क्यों क प्राच्य शक्षा का सार्वभौमीकरण भी सत्यार्थप्रकाश की ही देन है । गुरुकुलों की स्थापना से एक ओर शक्षा को दिशा मली वहीं राष्ट्रीय गौरव की रक्षा के लये सङ्घर्ष और समर्पणशील ब लदानी भी देशोन्नति में सर्वा धक हुये । अतः निश्चयपूर्वक कहा जा सकता है क सत्यार्थ प्रकाश की उपादेयता अन्य प्रेरणाओं की तरह राष्ट्रीय प्रेरणा स्रोत के रूप में भी सदा रहेगी ।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. मनुस्मृति -मह र्षमनु आर्ष साहित्य प्रचार ट्रस्ट
2. सत्यार्थप्रकाश -मह र्ष दयानन्द सरस्वती आर्ष साहित्य प्रचार ट्रस्ट 2016
3. अथर्ववेद -परोपकारिणी सभा
4. यजुर्वेद -गुरुकुल गौतमनगर
5. भारतभारती- मै थलीशरण गुप्त साकेत प्रकाशन
6. पृ थवीपुत्र- डा वासुदेवशरण अग्रवाल प्रभात प्रकाशन
7. समग्र सावरकर वाङ्मय महाराष्ट्र
8. ऋग्वेद -गुरुकुल गौतम नगर